

भारत संघ

बनाम

सतीश चंद्र शर्मा

27 नवंबर, 1979

[वी. आर. कृष्णा अय्यर और आर.एस. पाठक जेजे.]

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (1908 का V) आदेश 39 नियम 2(3) - रेलवे कर्मचारी द्वारा मुकदमा - निषेधाज्ञा आवेदन में न्यायालय ने सेवा में बहाली का आदेश दिया - विभाग द्वारा गैर-अनुपालन - न्यायालय ने विभागीय संपत्ति की कुर्की का आदेश दिया और अधिकारियों को सिविल जेल - कुर्की के लिए संपत्ति निर्दिष्ट नहीं है, हिरासत के लिए अवमानना करता का नाम नहीं बताया गया - ऐसा आदेश क्या वैध है।

प्रत्यर्थी एक रेलवे कर्मचारी के खिलाफ विभाग द्वारा कदाचार के लिए कार्रवाई की गई थी। उसने उन्हें जारी किए गए 'कारण बताओ' नोटिस का जवाब नहीं दिया और जब अनुशासनात्मक कार्यवाही एकतरफा आगे बढ़ी तो उसने आगे की विभागीय कार्रवाई के खिलाफ प्रतिरक्षा की घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के लिए वाद दायर किया। उसने विभाग द्वारा अनुशासनात्मक जांच जारी रखकर सेवा में उनकी स्थिति को प्रभावित करने से रोकने और उनका पूरा वेतन देना जारी रखने के लिए एक अंतरिम निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन भी दायर किया। सुनवाई के बाद, मुन्सिफ ने निर्देश दिया कि प्रत्यर्थी को उसी पद पर रखा जाए जो वह वेतन, विशेषाधिकारों और अन्य सभी अनुलाभों के मामले में विभागीय जांच शुरू होने से पहले रखता था। विभाग ने इस आदेश के खिलाफ अपील की और पुनः बहाली के निर्देश को लागू करने से पहले जिला न्यायालय में निर्णय का इंतजार किया।

इस बीच प्रतिवादी ने निषेधाज्ञा आदेश की अवज्ञा के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 नियम 2(3) के तहत एक आवेदन दायर किया। विचारण न्यायालय ने यह पाते हुए कि मुन्सिफ के आदेश का पालन नहीं किया गया था, उक्त आदेश के अनुपालन के लिए 15 दिनों का समय दिया और इसकी विफलता पर निर्देश दिया कि विभाग की संपत्ति की कुर्की के आदेश के साथ विभाग का दौरा किया जाएगा और इसके अधिकारियों को सिविल जेल भेजा जाएगा।

एक असफल अपील और एक प्रतिफलित प्रतिफल विभाग का भाग्य था। उच्च न्यायालय ने एक अवलोकन-सह-निर्देश दिया कि चूंकि मुन्सिफ न्यायालय के आदेश की अवज्ञा के लिए कार्यवाही के साथ आगे नहीं बढ़ सकता है, इसलिए यह संबंधित मुन्सिफ का काम होगा कि वह संबंधित अधिकारी का नाम बताए जिसे जेल भेजे जाने की आवश्यकता है और न्यायालय के आदेश के अनिवार्य अनुपालन के उद्देश्य से कुर्क की जाने वाली संपत्ति का विवरण दे।

इस न्यायालय में अपील को स्वीकार करते हुए,

अभिनिर्धारित किया: 1. जब उच्च न्यायालय ने वास्तव में डिक््रीटल अदेस्ज लप निष्पादित करने के लिए मंत्रालयी आदेश जरी किया था, जब उसने नामों को नामित करने का काम विचारण न्यायालय पर छोड़ कर गलती की। फेंसला सुनाये जाने के बाद नाम शामिल करने नामहीन मनुष्यों को अवमानना के आरोप में भी जेल नहीं भेजा जा सकता है। (304-एफ)

2. भारत संघ का एक सरकारी कर्मचारी जिसे कदाचार के लिए सेवा से हटा दिया गया था, उसे न्यायालय द्वारा दिए गए आदेश के तुरंत बाद पूरे वेतन के साथ बहाल नहीं किया जा सकता था। इसे विभिन्न अधिकारियों को सूचित किया जाना था, विभिन्न स्तरों पर आदेश दिए जाने थे, फाइलों को स्थानांतरित करना था और

कार्यान्वयन से पहले विकास प्रक्रिया के लिए नोटिंग की जानी थी। इन सब में समय लगता है और जब न्यायालय का आदेश अंततः प्रभावी हो जाता है, तो अधिकारी के वेतन का भुगतान निश्चित रूप से कार्रवाई की विवादित धमकी की मूल तारीख से करना होगा। यह महसूस करने के लिए कि सरकार कैसे काम करती है, बिना रुके जल्दबाजी में दंडित करने के लिए आगे बढ़ना इस कठोर अधिकार क्षेत्र में उचित नहीं है जहां व्यक्तिगत स्वतंत्रता खतरे में है। [305 बी-डी]

3. स्वतंत्रता और संपत्ति की सुरक्षा की संवैधानिक पवित्रता अनिश्चित हो जाएगी और प्रक्रियात्मक कानून लटक जाएगा यदि मूल आदेश चुप रहता है और अपराधी की पहचान एक मंत्रिस्तरीय उपाय के रूप में छोड़ दी जाती है। [304 एफ]

4. जहां स्वतंत्रता और संपत्ति से वंचित किया जाना है, यह मौलिक है कि अस्पष्टता एक घातक बुराई है, भले ही जारी करने वाला प्राधिकारी न्यायालय हो। तत्काल मामले में, मुन्सिफ और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश प्रमुख व्यक्तियों और संपत्तियों की पहचान को अनिश्चितता में रखते हैं। केवल इसी कारण से, आदेश असुरक्षित हैं- अनिर्दिष्ट संपत्ति की कुर्की और अनाम अवमानकों की हिरासत दोनों के खिलाफ। [304 सी-जी]

5. न्यायालय की अवमानना के क्षेत्र में कानून को व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण न्यायिक प्राधिकरण के प्रति अति-प्रतिक्रियाशीलता से लेकर मामूली उदासीनता की चरम सीमाओं से बचना चाहिए। [300 ई]

6. न्यायालय की अवमानना की तरल, फिर भी वैध, अवधारणा न्यायाधीशों को कानून के शासन के तहत रखती है; क्योंकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता को एक प्रक्रियात्मक कवच द्वारा संरक्षित किया जाता है, भले ही इसका अभाव न्यायिक प्रक्रिया का परिणाम हो। [300 ई]

7. अवमानना की शक्ति को सीमित रखा जाना चाहिए और तलवार केवल तभी खींची जानी चाहिए जब न्यायालय को विश्वास हो कि जानबूझकर अवज्ञा या अवहेलना की गई है। [307 सी]

8. लेकिन एक बार जब सक्रिय आज्ञाकारिता का स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है, खेद की अभिव्यक्ति के साथ, कागजी- प्रक्रियाओं से प्रेरित अपरिहार्य समय-अंतराल के कारण अनुपालन में देरी हो जाती है, तो न्यायालय क्षमाशील हो सकती है। [307 डी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2031/1979

राजस्थान उच्च न्यायालय (जयपुर पीठ) जयपुर द्वारा एस.बी.पुनरीक्षण संख्या 112/76 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 20-1-79 से उत्पन्न विशेष अनुमति द्वारा अपील।

सोली जे. सोराबजी, सॉलिसिटर जनरल, सुभोध मार्केचा और गिरीश चन्द्र, अपीलार्थियों की ओर से।

बालकृष्ण गौड़, प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया-

कृष्णा अय्यर, न्यायाधिपति.

कदाचार के कारण सेवा से हटाए गए एक रेलवे इंस्पेक्टर की तत्काल बहाली में चूक के लिए तीन महीने के सिविल कारावास की सजा और केंद्र सरकार और उसके दो अधिकारियों की संपत्ति की कुर्की का एक अजीब मामला, विशेष अनुमति द्वारा इस अपील पर है।

न्याया प्रणाली न तो एक गुप्त गुण है और न ही एक आत्म-धर्मी प्रक्रिया है और अपने अपीलिय क्रिसिबल में, कम स्तरों पर दिए गए निर्णयों की आसानी से फिर से जांच करती है, भले ही विषय-वस्तु, जैसा कि यहाँ, न्यायिक आदेश की कथित अवज्ञा हो। न्याय अहंकारी नहीं है और सत्य की जीत आत्म-आलोचना से होती है। और इसलिए, इस न्यायालय को, इस तरह के एक अभेद्य परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, विचारण न्यायालय के दंडात्मक निर्देश की समीक्षा करनी चाहिए, जिसकी उच्च न्यायालय ने पुष्टि की, लेकिन हमारे सामने चुनौती दी, कि भारत संघ और रेलवे विभाग में उसके अधिकारियों-अपीलकर्ताओं-को उसके निषेधाज्ञा के आदेश का पालन न करके अपने अधिकार की अवमानना के लिए संपत्ति का नुकसान और व्यक्ति को कारावास का सामना करना पड़ता है। यह मामला हमें कुछ हद तक परेशान करता है और हमें न्यायालय का अवमान की न्यायशास्त्र की एक निश्चित शाखा में मूल बातों पर जाने के लिए विवश करता है।

जैसा कि वर्तमान में दिखाई देगा, दो प्रतीत होने वाले विरोधी पंथों का संक्षेपण, दोनों हमारे गणराज्य के लिए महत्वपूर्ण हैं, इस अपील द्वारा पेश किए गए महत्वपूर्ण मुद्दे की कुंजी है, जहां सेवा में बने रहने के लिए एक अनिवार्य निषेधाज्ञा की अवज्ञा, मुकदमेबाजी का इंतजार निरीक्षक, अनुशासनात्मक कार्यवाही की परवाह किए बिना जो तब तक कथित रूप से सेवा से उनके अस्तित्व में समाप्त हो गई थी। न्यायालय न तो कठोर होगा और न ही आज्ञाकारी होगा। न्यायालय की अवमानना के क्षेत्र में, कानून को व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण न्यायिक प्राधिकरण के प्रति अति-प्रतिक्रिया की चरम सीमा से बचना चाहिए और 'न्यायालय के पास कोई बंदूक नहीं है' की बेपरवाह भावना में न्यायालय के आदेशों के लिए काल्पनिक सम्मान से बचना चाहिए। परवाह क्यों?

'न्यायालय की अवमानना' की तरल, फिर भी वैध, अवधारणा न्यायाधीशों को कानून के शासन के तहत रखती है; क्योंकि, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, हमारे संवैधानिक

आदेश के तहत, एक प्रक्रियात्मक कवच द्वारा संरक्षित है, भले ही इसका अभाव न्यायिक प्रक्रिया का परिणाम हो। यह चेतावनी वर्तमान मामले में मांगी गई है जहां हम अनिर्दिष्ट सेवकों के आकस्मिक कारावास और भारत संघ की अनिर्दिष्ट संपत्तियों की जबरदस्ती कुर्की के एक विचित्र आदेश का सामना कर रहे हैं। और फिर भी, यह आदेश विशेष अवकाश से यहां आने से पहले दो अपीलों से बच गया है।

तथ्य कम हैं और कानून अस्पष्ट नहीं है; फिर भी, हमारे विचार में, अपील के तहत आदेश एक अति उत्साही आदेश है जिसके चेहरे पर घातक विफलताएं लिखी गई हैं। प्रतिवादी, पश्चिमी रेलवे में एक निरीक्षक, के खिलाफ कदाचार के लिए कार्रवाई की गई थी। जब 'कारण बताओ' नोटिस जारी किया गया था, तब वह नहीं आया और जब अनुशासनात्मक कार्यवाही आगे बढ़ी, तो वह विभागीय प्रक्रिया को परे करने की लिए कलात्मक रूप से मुनीफ की न्यायालय में पहुंचा और आगे की सरकारी कार्रवाई के खिलाफ प्रतिरक्षा और स्थायी निषेधाज्ञा की घोषणा के लिए मुकदमा दायर किया। अनिवार्य रूप से, उन्होंने अनुशासनात्मक जांच जारी रखते हुए रेलवे सेवा में उनकी स्थिति को प्रभावित करने से रोकने और अपना पूरा वेतन देना जारी रखने के लिए एक अंतरिम निषेधाज्ञा का प्रस्ताव रखा। दोनों पक्षों को सुनने के बाद न्यायालय ने 15 अप्रैल, 1974 को इस तरह का निषेधाज्ञा या रोक आदेश जारी किया, जिसके खिलाफ व्यर्थ अपील की गई और अंततः उच्च न्यायालय में पुँरिक्षण भी निष्फल साबित हुआ। एक ढका हुआ आदेश, जिसे बनाए रखा गया था, इस प्रकार है:

में, इसलिए, भारत संघ के एन.ए. और उसके कर्मचारियों को आदेश देता हूं और निर्देश देता हूं कि वे पश्चिमी रेलवे के आई.ओ.डब्ल्यू. के रूप में आवेदक की सेवाओं को हटाने, समाप्त करने या बर्खास्त करने के किसी अन्य आदेश को लागू या अन्यथा प्रभावी न करें और आगे निर्देश देता हूं कि आवेदक को कार्य निरीक्षक, डब्ल्यू.आर.एल. के पद

से जुड़े पद, शक्ति, वेतन, विशेषाधिकार और अनुलाभ पर उसी तरह बनाए रखा जाएगा और जारी रखा जाएगा जैसे कि हटाने का कोई आदेश या कोई अन्य आदेश पारित नहीं किया गया था।

दूसरे शब्दों में, उसे उस पद पर रखा जाएगा जैसा कि उसने वेतन, शक्ति, विशेषाधिकारों और अन्य सभी अनुलाभों के मामले में 14-1-1974 को रखा था, जिनका उसने 14-1-1974 को और उससे तुरंत पहले लाभ उठाया और आनंद लिया था।

अपीलार्थी ने, उम्मीद से लेकिन हानिकारक रूप से, जैसा कि घटनाएँ साबित करती हैं, बहाली के निर्देश को लागू करने से पहले उच्च न्यायालयों में निर्णय का इंतजार किया। लेकिन तब भी जब जिला न्यायालय में, अपील में, निषेधाज्ञा का मामला लंबित था, 15-7-1974 को आदेश 39 नियम 2(3) के तहत अवज्ञा के लिए एक आवेदन दायर किया गया। विचारण न्यायाधीश ने अपीलार्थियों को दोषी ठहराया और 5 जनवरी, 1976 को इन शर्तों में अनाम दोषियों के खिलाफ एक अस्पष्ट सजा सुनाई।

यह भी स्पष्ट है कि गैर-आवेदनकर्ताओं ने इस न्यायालय के दिनांक 15-4-74 के निर्णय के अनुसार मजदूरी और अन्य भत्तों का भुगतान जारी नहीं रखा है और इसलिए यह पूरी तरह से साबित हो गया है कि गैर-आवेदनकर्ताओं ने इस न्यायालय के दिनांकित 15-4-74 के आदेश का पालन नहीं किया है। अब गैर-याचिकाकर्ताओं को आगे आदेश दिया जाता है कि यदि वे 15 दिनों के भीतर 15.4.74 के आदेश का पालन करने में विफल रहते हैं तो संपत्ति की कुर्की के आदेश के साथ विरोधी पक्ष से मुलाकात की जाएगी और उन्हें सिविल जेल भेजा जाएगा। चूंकि गैर-आवेदक संख्या 2 को कोटा मंडल से

स्थानांतरित कर दिया गया है, इसलिए आदेश का अनुपालन वर्तमान मंडल अधीक्षक, कोटा द्वारा किया जाएगा।

(विद्वान महान्यायवादी द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत अनुवाद)

एक असफल अपील और एक अलाभकारी पुनरीक्षण शुरू हुआ। उच्च न्यायालय ने उत्साहपूर्वक भारत संघ को बताया कि कानून राजाओं का राजा है और उच्च ध्वनि शैली में चेतावनी दी गई है -

कि राज्य के पदाधिकारी इस देश में संविधान और कानून के शासन के कार्य करने के कम से कम 28 वर्षों के बाद, कानून के प्रति सम्मान दिखाते हुए न्यायिक घोषणा को समझें और शाब्दिक और ईमानदारी से लागू करें सभी अधिकारियों, सामान्य रूप से नागरिकों, वादियों और राज्य के कार्यकर्ताओं को पूरी गंभीरता से महान न्यायविद महर्षि मनु की निम्नलिखित आंतरिक कहावत को हमारे दिमाग में सर्वोच्च रखना चाहिए, अर्थात् 'कानून राजाओं का राजा है- उनसे कहीं अधिक कठोर और शक्तिशाली, कानून से बड़ा कुछ भी नहीं है। और कमजोर अपनी शक्तियों से बलवानों पर हावी होंगे और न्याय की जीत होगी। मैं चाहता हूं कि इसे न केवल सभी सरकारी कार्यालयों, महत्वपूर्ण सार्वजनिक संस्थानों, गलियों के कोनों और सड़क के कोनों में मार्गदर्शक रेखाओं के रूप में प्रदर्शित किया जाना चाहिए, बल्कि जीवन में किसी भी पद, पेशे, स्थिति और कार्य की परवाह किए बिना सभी द्वारा अक्षर और भावना दोनों में कार्य किया जाना चाहिए।

हम सहमत हैं, लेकिन यह जोड़ना चाहते हैं कि मनु पाठ को क्रॉमवेल के प्रसिद्ध कथन के साथ न्यायालयों में भी प्रदर्शित किया जाना चाहिए, जिसे महान न्यायाधीश, विद्वान हैंड चाहते थे कि विधायी और न्यायालय में लटका दिया जाना चाहिए: 'मैं आपसे विनती करता हूँ, मसीह की आंतों में, यह संभव है कि आप गलत हो!'

यदि हम मुन्सिफ के आदेश की शरीर रचना की जांच करते हैं, जिसे पूरे समय बरकरार रखा गया था, तो हम भयानक निहितार्थ देखते हैं कि यदि 15 दिनों के भीतर, निषेधाज्ञा का अनुपालन नहीं हुआ-जिसका अर्थ था लंबे वर्षों के वेतन का भुगतान और प्रतिवादी (जिसे तब तक हटा दिया गया था) की सेवा में फिर से शामिल होना, इन सभी के लिए एक विशाल पदानुक्रमित मशीन में धन की मंजूरी और निकासी को सुरक्षित करने के लिए बहुत अधिक समय की आवश्यकता थी-विरोधी पक्ष (जो, उनमें से?) संपत्ति की कुर्की के आदेश के साथ मुलाकात करेंगे (जो?) और उन्हें (जिसे? सिविल जेल में भेजा जाएगा (कितने समय के लिए?))। चूंकि गैर-आवेदक संख्या 2 को कोटा मंडल से स्थानांतरित कर दिया गया है, इसलिए आदेश का अनुपालन वर्तमान मंडल अधीक्षक, कोटा द्वारा किया जाएगा (और इसलिए, हस्तांतरण अधिकारी कारावास के खतरे में था?)। ब्रैकेटेड पूछताछ हमारी है, संक्षेप में यह इंगित करने के लिए कि जहां स्वतंत्रता और संपत्ति से वंचित किया जाना है, यह मौलिक है कि अस्पष्टता एक घातक बुराई है, भले ही जारी स्थानांतरिती प्राधिकारी न्यायालय हो। उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण में दुर्बलता को छोटे हिस्से में ठीक किया गया था जैसा कि वर्तमान में नोटिस किया जाएगा।

वैसे भी, इस आदेश पर उच्च न्यायालय ने तब तक रोक लगा दी थी जब तक कि उसने 20 जनवरी, 1979 को पुनरीक्षण को खारिज नहीं कर दिया। और यह अपीलार्थी का मामला है कि उसके बाद वेतन का भुगतान कर दिया गया है, गणना की गई है, मंजूरी प्राप्त की गई है और धन निकाला गया है और वर्षों के सभी देय राशि

वितरित करने के लिए तैयार हैं। सवाल यह है कि क्या अवज्ञा के लिए कार्रवाई कानूनी और उचित थी और, किसी भी मामले में, अपनी संपत्तियों को जब्त करके और उसके सेवकों को जेल में डालकर सरकार की कठोर सजा न्यायिक विवेक का त्याग था। और हमेशा यथार्थवाद से सूचित और पश्चाताप से प्रभावित।

हमारे यहाँ एक अंतर्वर्ती निषेधाज्ञा है, हालांकि असामान्य है, जिसकी दृढ़ता का परीक्षण इस न्यायालय में एक अलग कार्यवाही में किया जा रहा है। हम, अस्थायी रूप से, इसके वैध अस्तित्व की उपधारणा करते हैं और कथित उल्लंघन के अनुवर्ती कार्यवाही और सजा पर ध्यान केंद्रित करें। दिशा क्या थी? क्या प्रशासनिक प्रक्रियाओं की जड़ता को ध्यान में रखते हुए उस समय के भीतर अनुपालन करना व्यावहारिक हो सकता है? क्या यहाँ तथ्यों के संदर्भ में बार-बार इनकार किया गया था, और, यदि ऐसा है, तो किसके द्वारा? न्यायालय कब निचले स्तर पर सरकारी कर्मचारियों के कारावास की चरम सीमा तक जाती है, जिन्हें अवज्ञा के लिए ऊपर के आदेशों पर कार्य करना पड़ता है? क्या यह न्यायिक विवेकाधिकार का मार्ग है कि न्यायाधीश को दया से शांत किया जाए या इसके विपरीत व्यवहार किया जाए? सबसे बढ़कर, हालांकि यह सीमा में उत्पन्न होता है, क्या अनिर्दिष्ट गुणों के आकस्मिक संलग्नक का कोई क्रम हो सकता है? क्या न्यायालय निर्णय के लंबे समय बाद जीवन देने वाले अंगों को भरने के लिए एक सर्वव्यापी निर्देश देकर आदेश में किसी भी अज्ञात व्यक्ति को कैद कर सकती है और शायद, जमानतदार को जब्त करने की अनुमति दे सकती है जिसे वह भंगकर्ता मानता है? हो सकता है, 'जल्दी करो' और 'धीरे-धीरे जल्दी करो' उन सभी के लिए अच्छे ध्येय हों जो या तो ऑटोमोबाइल के पहिये पर या सार्वजनिक पदाधिकारी की कलम द्वारा से शक्ति का प्रयोग करते हैं।

हम इन प्रश्नों को हल करने के लिए आगे बढ़ेंगे जो उनके उत्तरों को उनके ही सूत्रीकरण में खोलते हैं। उदाहरण के लिए, केवल इस स्पष्ट उत्तर के लिए पूछना नहीं है

कि कोई भी आदेश, चाहे वह कितना भी उच्च हो, उचित या सकारण नहीं हो सकता है यदि यह भाग III का कवच पहने हुए नागरिक की पहचान को निर्दिष्ट किए बिना, खतरे में डाल देता है। और फिर भी, विद्वान मुन्सिफ ने केवल निर्देश दिया कि 'विरोधी पक्ष' (केंद्र सरकार सहित तीन की बहुलता) को सिविल जेल भेजा जाए। इसके अलावा, आदेश में कहा गया है कि संभागीय अधीक्षक (पी2) का तबादला कर दिया गया है और फिर भी निर्दोष स्थानांतरितकर्ता को कारावास के खतरे में डाल दिया गया है। इस घातक हाव को महसूस करते हुए, उच्च न्यायालय ने अवलोकन-सह-निर्देश देकर जम्हाई के आँसू को ठीक करने की मांग की:

विद्वान मुंसिफ मजिस्ट्रेट, जिन्होंने 5 जनवरी, 1976 को पिछला आदेश पारित किया था, संबंधित याचिकाकर्ताओं को सिविल जेल भेजने और संपत्ति की कुर्की की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ा सके। यह संबंधित मुन्सिफ के लिए होगा कि वह संबंधित अधिकारी का नाम बताए, जिसे जेल भेजे जाने की आवश्यकता है और 5 जनवरी, 1976 के फैसले में पहले से दिए गए निष्कर्ष के अनुसार अनिवार्य अनुपालन के उद्देश्य से कुर्क की जाने वाली संपत्ति का विवरण दे, जैसा कि अपील में संशोधित किया गया है।

(जोर देकर जोड़ा गया)

न्यायालय तब भी अथक रही जब उसे सूचित किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसार वेतन का भुगतान पहले ही किया जा चुका है। उच्च न्यायालय के फैसले के समापन भाग में कहा गया है कि संबंधित मुन्सिफ को "संबंधित अधिकारी को जेल भेजने और संबंधित संपत्ति की कुर्की के संबंध में अपने आदेश को लागू करने के लिए त्वरित कार्रवाई करनी चाहिए जैसा कि उनके फैसले में

उल्लेख किया गया है.....।" दोनों आदेश प्रमुख व्यक्तियों और संपत्तियों की पहचान को अनिश्चितता में रखते हैं।

हम थोड़ा आश्चर्यचकित हैं कि अवमानना क्षेत्राधिकार में एक अदालत को आदेश में नाम लिए बिना किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करना चाहिए जिसे अदालत के जमानतदार को हिरासत में लेना चाहिए या जेल अधिकारियों को प्राप्त करना चाहिए। समान रूप से स्पष्ट रूप से, प्रक्रियात्मक दायित्वों की अवहेलना करते हुए, निर्णय में विशिष्ट किए बिना संपत्ति कैसे ली जा सकती है? ऐसा नहीं है कि अधिकारी को जेल भेजे जाने और हिरासत के खिलाफ उसके मामले तदर्थ विचार किए बिना, मुन्सिफ कुर्क की जाने वाली संपत्ति का तदर्थ विवरण देता है, बिना उसके मालिक को सुने कि उसकी संपत्ति को क्यों नहीं छुआ जाना चाहिए। स्वतंत्रता की संवैधानिक पवित्रता और (तब) संपत्ति का संरक्षण आकस्मिक हो जाएगा और प्रक्रियात्मक कानून अधर में लटक जाएगा यदि मूल आदेश मौन है और अतदर्थधी की पहचान एक मंत्रिस्तरीय उपाय के रूप में छोड़ी जाती है। उच्च न्यायालय ने इस तरह के नामों को नामित करने के लिए विचारण न्यायालय को तदर्थ छोड़ने में गलती की थी, जब उसने वास्तव में अपने आदेश को लागू करने के लिए मंत्रिस्तरीय आदेश जारी किया था। नामहीन मनुष्यों को अवमानना के नाम तदर्थ भी निर्णय दिए जाने के बाद नाम जोड़कर जेल नहीं भेजा जा सकता है। प्राकृतिक न्याय व्यापक सिद्धांत है जो भारतीय न्यायशास्त्र में प्रक्रियात्मक निष्पक्षता का अभिन्न अंग है। केवल इसी कारण से, चुनौती के तहत सीमा आदेश असुरक्षित है-अनिर्दिष्ट संपत्ति की कुर्की और अनाम अवमानकों की हिरासत दोनों के खिलाफ।

इस अमान्य परिस्थिति से स्वतंत्र रूप से, यह स्पष्ट है कि तथ्यों को उनकी यथार्थवादी सेटिंग में सराहा जाने के बाद न्यायिक आक्रोश का कोई आधार नहीं है। विचारण न्यायालय द्वारा 15-4-74 को निषेधाज्ञा का आदेश दिया गया था और उच्च

न्यायालय के समक्ष लाया गया था जहां 3-1-1979 को पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी गई थी। कड़ाई से कहें तो निषेधाज्ञा के आदेश पर रोक नहीं लगाई गई थी और इसका पालन किया जाना चाहिए था। यह कहने का कोई बहाना नहीं है कि जब अपील और पुनरीक्षण लंबित होता है, तो मुकदमेबाजी की उम्मीदें लोगों को असंवेदनशीलता की ओर ले जाती हैं। जबकि यह विवेकपूर्ण नहीं है, यह जिद्दी गैर-अनुपालन के बारे में निर्णय लेने में घटक है। रेलवे के उच्च अधिकारियों द्वारा कथित रूप से सेवा से हटाए गए सरकारी कर्मचारी की बहाली का आदेश देने वाले निषेधाज्ञा की अवज्ञा के लिए कार्यवाही शुरू करना, पूर्व अवधि के लिए वेतन के भुगतान के साथ, अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन है, यदि पर्याप्त समय नहीं दिया जाता है। यथार्थवाद के एक छोटे से स्पर्श ने आसानी से उच्च न्यायालय को आश्चर्य कर दिया होगा कि भारत संघ के एक सरकारी कर्मचारी जिसे कदाचार के लिए सेवा से हटा दिया गया है, उसे न्यायालय द्वारा आदेश दिए जाने के तुरंत बाद पूर्ण वेतन के साथ बहाल नहीं किया जा सकता है। इसे विभिन्न अधिकारियों को सूचित किया जाना था, विभिन्न स्तरों पर आदेश दिए जाने थे, फाइलों को स्थानांतरित करना था और कार्यान्वयन से पहले विकास प्रक्रिया के लिए नोटिंग की जानी थी। इन सब में समय लगता है और जब न्यायालय का आदेश अंततः प्रभावी हो जाता है, तो अधिकारी के वेतन का भुगतान निश्चित रूप से कार्रवाई की विवादित धमकी की मूल तारीख से करना होगा। यह महसूस करने के लिए कि सरकार कैसे काम करती है, बिना रुके जल्दबाजी में दंडित करने के लिए आगे बढ़ना इस कठोर अधिकार क्षेत्र में उचित नहीं है जहां व्यक्तिगत स्वतंत्रता खतरे में है। लार्ड कर्जन के दिनों में प्रचलित प्रक्रियाओं का वर्णन आज भी अच्छा है। तीखी स्याही में डूबे उनके अधीर शब्द इस प्रकार हैं:

"..... प्रशासन हाथी की तरह नीरस हो गया था- 'बहुत शालीन, बहुत शक्तिशाली, उच्च स्तर की बुद्धि के साथ, लेकिन अपनी चाल में एक शाही धीमी गति के साथ'।

"गोल और गोल, पृथ्वी की दैनिक चक्र की तरह, शानदार, गंभीर, निश्चित और धीमी गति से चला गया: और अब, नियत समय में, इसने अपनी कक्षा पूरी कर ली है, और मुझे समापन चरण को दर्ज करने के लिए आमंत्रित किया गया है।"⁽²⁾

हम जानबूझकर विलंब को माफ करने के पक्ष में नहीं हैं और न ही न्यायालय के आदेशों का पालन करने में चूक के आधार के रूप में प्रशासन में अनावश्यक ठहराव का सामना करने के पक्ष में हैं। कानून आलसी मालिकों और न ही 'चालाक' चोरी करने वालों का सम्मान नहीं करता है। लेकिन अपराधबोध की उस प्रजाति का कोई प्रमाण हमारे ध्यान में नहीं लाया गया है कि केवल निष्क्रियता का कोई लंबा लाभ नहीं है, जिसका अर्थ है कि आपराधिक मनःस्तिथि एक अनिवार्य शर्त है।

इसलिए, हम न्यायालय के आदेश का सम्मान करते हैं, जिसमें अपीलकर्ताओं को अवमानना में रखा गया है, एक जल्दबाजी वाला उपाय है, जो शायद तत्काल अनुपालन की अनुपस्थिति में से नाराज है।

वाक्य की गंभीरता समझ से परे है। हम यह नहीं समझ सकते कि न्यायालय इस तथ्य को कैसे नजरअंदाज कर सकती है कि उच्च न्यायालय के आदेश की तारीख से अब तक वेतन का भुगतान किया गया था और उचित मंजूरी और चेक निकालने पर वेतन वापस करने की तैयारी का न्यायालय में प्रतिनिधित्व किया गया था। हमारे सामने, विद्वान सॉलिसिटर जनरल ने कहा कि पूरा पिछला वेतन भुगतान करने के लिए तैयार है और आवश्यक चेक पहले ही तैयार हो चुका है। हम न्यायालय के रिट के

खिलाफ चुनौतीपूर्ण रवैया अपनाने के लिए भारत सरकार की ओर से कोई झुकाव नहीं देखते हैं। यह सर्वविदित है कि अवमानना की शक्ति को सीमित रखा जाना चाहिए और शपथ को केवल तभी लिया जाना चाहिए जब न्यायालय को विश्वास हो कि जानबूझकर अवज्ञा या अवहेलना की गई है। संयम सत्ता को गरिमा प्रदान करता है और हम महसूस करते हैं कि वर्तमान मामले के तथ्य एक वास्तविक समय के भीतर अनुपालन करने और उसके बाद कड़ी कार्रवाई करने की चेतावनी की तुलना में किसी भी मजबूत कदम की मांग नहीं करते हैं। हमारा यह विचार नहीं है कि भारत संघ को अनुचित अनुग्रह या उसके अधिकारियों की एकतरफा इच्छा दिखाई जानी चाहिए। लेकिन एक बार जब सक्रिय आज्ञाकारिता का स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है, खेद की अभिव्यक्ति के साथ, कागजी- प्रक्रियाओं से प्रेरित अपरिहार्य समय-अंतराल के कारण अनुपालन में देरी हो जाती है, तो न्यायालय क्षमाशील हो सकती है। यहाँ, अनुपालन और पश्चाताप अब मौजूद हैं।

इन परिस्थितियों में, हम अपील को स्वीकार करते हैं और भारत संघ, प्रथम अपीलकर्ता के वचन को दर्ज करते हैं कि प्रत्यर्थी को देय पूरे वेतन का भुगतान आज से एक सप्ताह के भीतर किया जाएगा।

एन.वी.के.

अपील स्वीकार की गई।

- (1) करजों, अर्ल ऑफ़ रॉ इद्शाय में दर्शित, लार्ड करजों लन्दन की जीवनी, 1928
वॉल्यूम 2 पी.64
- (2) करजों टू हैमिलटन, 21 फरबरी 1901

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक विनायक कुमार जोशी, अधिवक्ता द्वारा किया गया है ।

अस्वीकरण- इस निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।
